MAH/MUL/0305[illegible]
ISSN 2319 931[illegible]

Vidyawarta UGC
Jr.No.62759
UGC Approved Refereed Journal

Vidyawarta®

International Multilingual Research Journal

Issue-22, Vol-17 Jan. to Mar.2018

Editor
Dr.Bapu G.Gholap

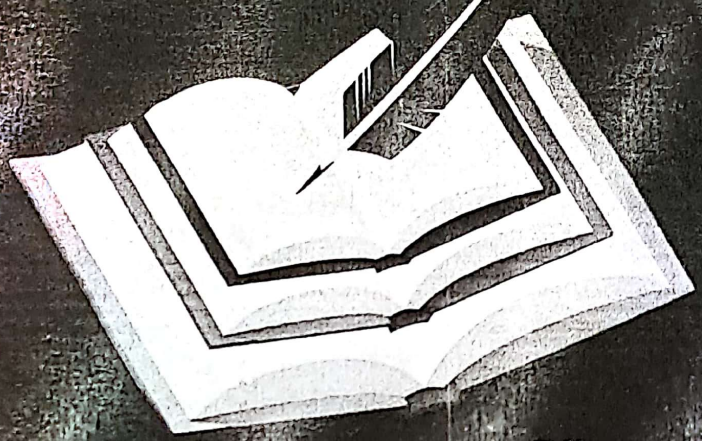

Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.
International Multilingual Research Journal

Scanned with OKEN Scanner

27) राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान द्वारा संचालित ग्वालियर–चम्बल..... || 99
सावित्री राज, डॉ. अमृता गुप्ता

28) महिला उद्यमिता के उज्ज्वल भविष्य की संभावनाएँ विभिन्न बैंकों की ..... || 103
डॉ. राजीव कुमार झालानी, प्रो. हेमलता नागोरी

29) प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत अध्यापकों के जीवन मूल्यों का अध्ययन || 109
डॉ. अनुप्रिया शर्मा, कल्पना पटेल

30) 'रेशम' उद्योग में महिलाओं की भागीदारी का अध्ययन''..... || 112
संजय कुमार कंसारी

31) बाल श्रम : एक प्रमुख समस्या (चौखुटिया विकास खंड ..... || 117
डॉ. रेनू प्रकाश

32) भारत में वाद्य वादन: एक शोचनीय स्थिति || 120
Ranjana Kalra

33) कक्षा ९वीं के छात्रों की उपलब्धि पर वैज्ञानिक अभिवृत्ति के ..... || 122
श्रीमती विजयलक्ष्मी जायसवाल

34) भारतीय संविधान के महान शिल्पी : डॉ. बी.आर. अम्बेडकर : || 126
प्रा.बी.सी. झाला

35) विभिन्न प्रबंधन के विद्यालयों के शिक्षकों की कार्य संतुष्टि एवं ..... || 133
कुमारी कविता दवे, डॉ. जी. एस. मिश्रा

36) भारतीय आचार्यों एवं पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार काव्य हेतु || 137
डॉ. संगीता जगताप

37) औरंगजेब सामयिक ब्रजप्रदेश में गोकुल सिंह जाट का विद्रोह..... || 143
डॉ. नीरज कुमार गौड़

38) 'प्राचीन हिंदी साहित्याण्वेषी शिखर पुरूष : सांकृत्यायन' || 148
प्रा.डॉ.शशिकांत सोनवणे 'सावन'

39) भारतीय बौद्ध दर्शन से प्रभावित हिंदी साहित्य || 155
प्रा. डॉ. शशिकांत सोनवणे 'सावन'

https://sites.google.com/site/vidyawartajournal | http://www.vidyawarta.blogspot.com

Scanned with OKEN Scanner

36

भारतीय आचार्यों एवं पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार काव्य हेतु

डॉ. संगीता जगताप
विभागाध्यक्षा
कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
चिखलदरा, जिला. अमरावती (महाराष्ट्र)

काव्य कवि के आत्मा की पुकार होती है। जब किसी व्यक्ति विशेष के मन में देखे हुए, किसी दृश्य, घटना या स्वकल्पना और अपनी ही अनुभूतियों का आलोड़न–विलोड़न होता है तब उसके आत्मा की स्वस्फुटित वाणी काव्य के रूप में अवतरित होती है। यद्यपि आधुनिक युग में 'काव्य' इस संज्ञा का अर्थ संकोच हो गया है। प्राचीन युग में काव्य को व्यापक अर्थ में देखा जाता था। काव्य के अंतर्गत नाटक, कविता, गद्य एवं पद्य और चम्पू काव्य का समावेष होता था। वर्तमान समय में इन सभी विधाओं के लिए जिस तरह 'साहित्य' शब्द का प्रयोग होता है उसी तरह प्राचीनकाल में इसे काव्य के नाम से अभिहित किया जाता था। भारत में प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक युग तक तथा पाश्चात्य विद्धानों ने काव्य हेतु पर अमूल्य चिन्तन किया है। वह क्या तथ्य है जिसके कारण कवि काव्य का सृजन करता है, इस विषय पर हमारे भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने समग्र चिन्तन कर अपने विचारों को अपने–अपने तर्कों के साथ प्रस्तुत किया है। काव्य हेतु अर्थात वह कारण जिससे काव्य का जन्म हो। वह क्या है जिसके कारण काव्य का सृजन कवि करता है।

काव्य हेतु की परिभाषा एवं स्वरूप:

काव्य की परिभाषा क्या है ? इस प्रश्न पर आचार्य भामह के ''शब्दार्थो सहितौ काव्यम्'' से लेकर पण्डित राज जगन्नाथ के ''रमणीयार्थ प्रतिपादक: शब्द : काव्यम्'' तक समग्र रूप से विचार हो चुका है। अब हम काव्य हेतु क्या है ? इसका विचार करेंगे। काव्य हेतु की परिभाषा इस प्रकार है।

''कवि शिक्षा के अंतर्गत काव्य निर्माण की सामर्थ्य उत्पन्न करने वाले साधनों को काव्य हेतु या काव्य के कारण कहा है।'' हेतु शब्द का शाब्दिक अर्थ है– कारण कवि अपनी प्रतिभा कल्पना आदि से प्रेरणा पाकर ही काव्य रचना करता है, काव्य हेतु को कवि की काव्य रचना करने की प्रेरक शक्ति माना जाता है। ''वामन ने काव्य हेतु के लिए'' 'काव्यांग' शब्द का प्रयोग किया है।

''काव्य हेतु वह शक्ति अथवा कारण है जिसके द्धारा कवि आत्मानुभूतियों या घटनाओं को संसार के सामने प्रस्तुत कर सकता है।''

भारतीय आचार्यों के अनुसार काव्य हेतु:

भारतीय काव्यशास्त्र में काव्य हेतु पर समग्र चिन्तन हमें मिलता है। अध्ययन की सुलभता के लिए हम भारतीय आचार्यों को तीन भागों में विभक्त कर सकते है।

अ) संस्कृत आचार्य
ब) रीतिकालीन आचार्य
क) आधुनिककालीन हिन्दी आचार्य

अ) संस्कृत आचार्य :

संस्कृत काव्यशास्त्र में ६टी शताब्दी में सबसे पहले आचार्य भामह मिलते है जिन्होंने काव्य हेतु पर अपने विचार व्यक्त किए। आ. भामह ने इस संदर्भ में दो श्लोक लिखे है जो इस प्रकार है –

''गुरूपदेशाध्येतु शास्त्र जडधियाशष्प्यलम्।
काव्यं तु जामते जातुकस्यचित्प्रतिभावत:।।''[१]

अर्थात भामह के अनुसार जड़ बुद्धि भी गूरू के उपदेश से तथा शास्त्रों का अध्ययन करने से ज्ञानी बन सकता है परन्तु काव्य सृजन तो किसी मूर्धन्य के द्वारा ही हो सकता है। अर्थात् भामह ने काव्य का हेतु प्रतिभा को माना है। आ. भामह का दूसरा श्लोक इस प्रकार है –

''शब्दाभिधेय विज्ञाय कृत्वातद्विदुपासनाम्।
विलोक्यान्यनिबन्धांश्च कार्य: काव्यक्रियादर:।।''[२]

अर्थात शब्दशास्त्र को जानने वाले विद्वानों

की सेवा, शब्द एवं शब्दार्थ का ज्ञान प्राप्त कर एवं अन्य कवियों की रचना का अध्ययन कर काव्य सृजन में रूचि दिखलानी चाहिए। अत: यह स्पष्ट है कि भामह के अनुसार काव्य हेतु व्युत्पत्ति और अभ्यास है परन्तु वे इन सबसे अधिक प्रतिभा को महत्वपूर्ण मानते है।

आचार्य दण्डी:

आ. दण्डी ७ वी शताब्दी में अवतरित हुए है। इन्होंने अपने ग्रन्थ 'काव्यादर्श' में आ. भामह के ही मत को परिकृत कर अपना काव्य हेतु दिया है। दण्डी के अनुसार काव्य हेतु में प्रतिभा ही महत्वपूर्ण नही है उसके साथ व्युत्पत्ति और अभ्यास भी जरूरी है। वे कहते हैं –

''नैसर्गिकी च प्रतिभा श्रश्ंत च बहुनिर्मलम्।
अमन्दचामियोगोश्ष्या करणं काव्यसम्पद:।।''[3]

दण्डी का मानना है जन्मजात प्रतिभा, अनवरत अभ्यास काव्य सम्पत्ति के हेतु है। दण्डी का तो यह भी मानना है कि प्रतिभा के अभाव में व्युत्पत्ति और अभ्यास के द्वारा काव्य सृजन किया जाता है। अत: यह स्पष्ट है कि दण्डी प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास तीनों को काव्य हेतु मानते है।

आचार्य वामन:

आठवी शती के उत्तरार्द्ध में आ. वामन ने अपने ग्रन्थ 'काव्यालंकार सूत्र' में काव्य हेतु पर अपने पूर्व के आचार्यो से सुव्यवस्थित एवं विस्तार से चर्चा की है।

उन्होंने काव्यांगो को तीन भागों में विभक्त किया है। लोक, विद्या और प्रकीर्ण। यहा लोक का अर्थ है लौकिक ज्ञान और विद्या का अर्थ शास्त्रज्ञान। प्रकीर्ण को उन्होंने छ: भागों में बाटा है –

लक्ष्यतत्व – अन्य कवियों के काव्य पर चिन्तन करना जिससे लक्ष्य का ज्ञान हो जाये ।

अभियोग – काव्य सृजन के लिए प्रयत्न करना।

वृद्ध सेवा – काव्य कला के तज्ञ व्यक्तियों के सानिध्य में रहकर एवं उनकी सेवाकर काव्य कला का ज्ञान प्राप्त करना।

अन्वेषण – अपने रचना की स्वयं आलोचना कर उसमें से सदोश पदों को हटाकर निर्दोश पदों को रखना।

प्रतिभान – कवित्व का मुख्य अंकुर, जो जन्मजात संस्कार शक्ति रूप में रहता है।

अवधान – एकाग्रचित्त होकर काव्य रचना करना।

समग्र रूप से अगर वामन के काव्य हेतु पर विचार करे तो यही तथ्य सामने आता है कि उनका काव्य हेतु प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास है। यद्यपि उन्होंने व्युत्पत्ति को लोक और विद्या के रूप में विभाजित करके काव्य सर्जना का मुख्य कारण माना है और प्रकीर्ण के अंतर्गत प्रतिभा को रखा है परंतु दूसरी ओर वे यह भी कह देते है कि प्रतिभा के अभाव में रचा गया काव्य उत्कृष्ट कोटी का नहीं हो सकता।

रूद्रट : (९ वीं शती)

रूद्रट ने अपने पूर्ववर्ती आचार्यो के तरह ही काव्य हेतु प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास को माना हैं। इन्होंने कोई नया हेतु नही दिया। प्रतिभा को इन्होंने सहजा और उत्पद्या दो रूपों में विभक्त किया।

आचार्य आनन्दवर्धन:

९वीं शती के उत्तरार्द्ध में आ. आनन्दवर्धन के ग्रन्थ 'ध्वन्यालोक' में मुख्य धारा के अन्तर्गत न आकर प्रसंग वंश काव्य हेतु हमें प्राप्त होता है। उनके अनुसार काव्य के दो हेतु है। प्रतिभा और व्युत्पत्ति । व्युत्पत्ति के अभाव में प्रतिभा के बल पर कवि काव्य सृजन कर सकता है। अत: इन्होंने माने दो हेतु है पर इनका बल प्रतिभा की ओर है।

आचार्य राजशेखर:

'काव्य मीमांसा' के अंतर्गत काव्य हेतु की समस्या पर विस्तार से विवचन आचार्य राजशेखर ने किया है। इन्होंने काव्य–सर्जना के लिए रचनाकार में एक विशेश प्रकार की शक्ति की कल्पना की और उसे प्रतिभा से भिन्न और प्रमुख माना और कहा कि शक्ति ही काव्य का मूल हेतु है। शक्ति होने पर ही प्रतिभा और व्युत्पत्ति का आर्विभाव होता है।

आचार्य मम्मट:

काव्य हेतु पर विचार करते हुए ग्याहरवीं शती में आचार्य मम्मट ने अन्य आचार्यो की तुलना में सबसे प्रभावशाली विचार प्रस्तुत किये हैं। वे कहते हैं

''शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्र काव्याद्यवेक्षणात।

Scanned with OKEN Scanner

काव्यज्ञशिक्षाभ्यास इति हे तुस्तदुभवे।।''[4]

अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं शक्ति एक महत्वपूर्ण प्रकार का संस्कार होता है जिसमें कवित्व का बीज शक्ति ही काव्य का मूल प्रयोजन है अत: इसके बिना काव्य का सृजन नही हो सकता है। अगर कोई यत्न भी करेंगा तो वह काव्य निम्न प्रति एवं उपहासास्पद होगा। इसके अतिरिक्त व्याकरण ज्ञान, काव्य मर्मज्ञों से प्राप्त शिक्षा, लोकशास्त्र आदि के मनन और चिन्तन से जो ज्ञान प्राप्त होता है, उसे व्युत्पत्ति कहते है। काव्य सृजन के लिए निरन्तर प्रयत्नशीलता को अभ्यास कहते है। अत: इन तीनों को पृथक रूप से नहीं देखा जा सकता है। यह तीनों काव्य उत्पत्ति के प्रमुख हेतु है।

मम्मट के पश्चात् के आचार्यों में कुछ ने तो इनका समर्थन किया तो कुछ आचार्यो ने भामह के बताएं प्रतिभा को ही महत्वपूर्ण माना है।

ब) रीतिकालीन आचार्य:

रीतिकालीन हिन्दी आचार्यो ने काव्य हेतुओं की ओर कोई विशेश ध्यान नहीं दिया। प्राय: सभी आचार्यो ने संस्कृत के आचार्यो के मतों के घेरे में ही अपने को सीमित रखा है। रीतिकालीन आचार्यो ने जैसे अन्य काव्यांगों के क्षेत्र में संस्कृत आचार्यो का अनुकरण किया है वैसे ही काव्य हेतुओं के सम्बन्ध में भी संस्कृत आचार्यो का अनुगमन किया।

क) आधुनिककालीन हिन्दी आचार्य:

आधुनिक विवेचकों में डॉ. त्रिगुणायत के विचार दृष्टव्य हैं — ''मेरी समझा में काव्य की जनयित्री मनुष्य की प्राणभूत विशेषता मनन की प्रवृत्ति है।'' यहाँ मनन शब्द विचारणीय है। किसी विषय पर हम जब गंभीरता से विचार करते हैं वही मनन कहलाता है। अत: हम यह कह सकते हैं कि मनन तो सभी करते हैं परन्तु सभी की मननशीलता काव्य नहीं बन पाती। अत: डॉ. त्रिगुणायत का मत समीचीन प्रतीत नहीं होता।

छायायावादी कवि ''सुमित्रानंदन पंत'' ने विरह वेदना को काव्य रचना का मूल कारण बताया—

''वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान। निकलकर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान।।''

पाश्चात्य चिंतन में काव्य हेतु:

भारतीय काव्यशास्त्र के अनुरूप ही पाश्चात्य काव्यशास्त्र में भी आदिकाल से ही काव्य हेतु पर विचार किया गया है। पश्चिम में एक कहावत प्रसिद्ध है — ''Poets are born and not made.'' पाश्चात्य विद्वानों में अधिकतर विद्वार कम—अधिक मात्रा में प्रतिभा को ही काव्य हेतु मानते है। इनके अनुसार वाग्देवता या वाग्देवी के आदेश से ही कवि में कवित्व शक्ति का आविर्भाव होता है। पाश्चात्य विद्वानों में सर्वप्रथम 'सुकरात' ने अपने विचार काव्य हेतु को लेकर स्पष्ट किये। सुकरात के अनुसार कवि किसी विशिष्ट परिस्थिति से प्रभावित होकर काव्य रचना करता है। वे कहते हैं ''कवि कविता इस कारण नहीं करते कि वे बुद्धिमान हैं, वरन् इस कारण कि उनमें एक विशिष्ट प्रकृति अथवा प्रतिभा है जो उत्साह प्रदान करने वाली होती है।''[5] अत: स्पष्ट दिखाई देता है कि सुकरात ने प्रतिभा को काव्य माना है।

प्लेटो:

प्लेटो काव्य हेतु पर अपने विचार प्रगट करते हुए कहते हैं ''कवि विक्षिप्त प्राणी है और उसका काव्य विक्षिप्त क्षणों की वाणी।'' इस उद्वरण से स्पष्ट होता है कि प्लेटो काव्य सृजन को कवि के मन विक्षेप से मानते है परन्तु यह विक्षेप एक तरह से दैवी प्रेरणा का प्रतिफल है। अत: प्लेटो भी प्रतिभा को ही काव्य हेतु मानते है ऐसा प्रतीत होता है।

अरस्तू:

अरस्तू ने अपने गुरू प्लेटो का विरोध करते हुए काव्य के मुख्य दो हेतु दिए हैं। उनका मानना है कविता मुख्यत: दो कारणों से लिखी जाती है। उनके ही शब्दों में ''पहला कारण, सहज वृत्ति मनुष्य में शैशव से ही सन्निहित रहती है। अत: अनुकरण हमारे स्वभाव की एक सहज वृत्ति है। दूसरी वृत्ति है सामंजस्य और लय की — छंद भी स्पष्टता लय ही के अनुभाग होते हैं। इसलिए जो इस सहज शक्ति से सम्पन्न थे, उन्होंने धीरे—धीरे अपनी प्रवृत्तियों का विसा कर लिया और अन्त में उनकी भोंडी आशु रचनाओं से ही कविता का जन्म हुआ।''[6]

Scanned with OKEN Scanner

अरस्तू के अनुसार काव्य निर्माण का मुख्य कारण है अनुकरण की प्रवृत्ति। यह प्रवृत्ति मनुश्यों में बाल्यकाल से ही पनपती है। दूसरा हेतु अरस्तू ने लय और संगीत को माना है। अरस्तू ने अपने अनुकरण सिद्धान्त के अनुसार ही काव्य हेतु अनुकरण को माना है। अगर भारतीय आचार्यो के अनुरूप हमें इसे विवेचित करे तो अनुकरण ही अभ्यास है।

फ्रायड:

फ्रायड काव्य को दमित वासनाओं का प्रतिफल मानते है। उनके अनुसार मनुष्य सामाजिक बन्धनों के कारण अपनी वासनों को प्रत्यक्ष जीवन में प्रदर्शित नहीं कर पाता, यह दमित वासना मनुष्य के अचेतन मन में संचित होती है। फिर ऐसी अवस्था में जब चेतन मन जागरूक नहीं होता तब अचेतन मन परितृप्त करने का प्रयत्न करता है। वह अवस्था यातो स्वप्न है या काव्यसृजन की अर्द्ध चेतनावस्था।

एडलर:

एडलर ने काव्य सृजन को जीवन में अप्राप्त वस्तु या कल्पनाओं की पूर्ति कहा है। वे कहते हैं — मनुष्य को प्रत्यक्ष जीवन में जो प्राप्त नहीं होता उसे वह काव्य के माध्यम से प्राप्त करने का प्रयास करता है।

पाश्चात्य विद्वानों के काव्य हेतुओं पर दृष्टि डालने के पश्चात यह दिखाई देता है कि फ्रायड और एडलर को छोड़कर सभी विद्वान कम—अधिक प्रमाण में अभ्यास, व्युत्पत्ति और प्रतिभा, सौन्दर्य प्रेम आदि को ही भारतीय विद्वानों के अनुसार काव्य हेतु मानते हैं।

काव्य हेतु के प्रकार:

भारतीय आचार्यो और पाश्चात्य विद्वानों ने काव्य हेतु पर गंभीरता से विचार किया है और सभी किसी न किसी रूप में प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास को ही काव्य हेतु स्वीकार किया है। अत: काव्य हेतु के कितने प्रकार है उस पर हमें विचार करना चाहिए।

१. प्रतिभा:

काव्य हेतु के रूप में प्रतिभा को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। आचार्य दण्डी ने प्रतिभा को नैसर्गिक, पूर्व—जन्म के संस्कारों से युक्त, ईश्वर—प्रदत्त ज्ञान से युक्त निर्मल प्रज्ञा स्वरूप स्वीकार किया है। अभिनव गुप्त के गुरू भट्टतौती ने प्रतिभा उस शक्ति को माना है जो कवि में नूतन कल्पनाएँ जाग्रत करती है

''प्रज्ञा नवनवोन्मेशशालिनी प्रतिभा मता।।''[७]

आचार्य अभिनव गुप्त प्रतिभा को अपूर्व वस्तु के निर्माण में सक्षम शक्ति कहते हैं—

''प्रतिभा अपूर्ववस्तुनिर्माणक्षमा प्रज्ञा।''[८]

आचार्य अभिनव गुप्त के अनुरूप ही आ. मम्मट ने भी प्रतिभा को शक्ति शब्द से अभिनीहित किया —

''शक्ति कवित्वबीजरूप: संस्कारविषेश:।''[९]

पंडितराज जगन्नाथ प्रतिभा को घटनाक्रम अथवा रचना के अनुकूल शब्द तथा अर्थ की उपस्थिति के रूप में लिया।

आ. राजशेखर ने प्रतिभा और शक्ति दोनों भिन्न माना है। उनके अनुसार शक्ति ही रचनाकार में रहने वाली मूल काव्य हेतु है। इन्होंने प्रतिभा के दो रूप माने हैं —

i) कारयित्री प्रतिभा

ii) भावयित्री प्रतिभा

पद्ध कारयित्री प्रतिभा:

कवि का काव्य कर्म में उपकार करने वाली प्रतिभा कारयित्री प्रतिभा कहलाती है। जिस प्रतिभा से कवि, कर्म या काव्य की रचना करता है। यह कवि की उपकारक होती है यह कविगत होती है और मुख्य काव्य—निर्माण में उपयोगी होती है। अभिनव गुप्त ने कारयित्री प्रतिभा का स्वरूप स्पष्ट करते हुए कहा हैं —

''अपूर्व वस्तु निर्माणक्षमा प्रजा प्रतिभा।''[१०]

अर्थात अपूर्व वस्तुओं के निर्माण में क्षमता रखने वाली शक्ति (बुद्धि) को प्रतिभा कहा है।

भावयित्री प्रतिभा:

यह सहृदय पाठक और ग्राहक का उपकार करती है। यह प्रतिभा भावक, पाठक, आलोचक व कवि के श्रम और अभिप्राय को स्पष्ट करती है। इसके अभाव में कविता का वास्तविक मूल्यांकन नही हो सकता। आलोचक वही हो सकता है जो भावयित्री से सम्पन्न हो।

कारयित्री प्रतिभा के तीन भेद है —

१. सहजा, २. आहार्या (उत्पाद्या),

३. औपदेषिकी

१. सहजा:

जन्मजन्मान्तरों के संस्कारों की अपेक्षा रखने

Scanned with OKEN Scanner

वाली प्रतिभा सहजा होती है।

२. आहार्या (उत्पाद्या):

वर्तमान जन्म के संस्कारों से उत्पन्न प्रतिभा आहार्या या आहरण है।

३. औपदेशिकी:

उपदेश के फलस्वरूप प्राप्त होती है। अर्थात् तंत्र–मंत्र आदि साधनों से उत्पन्न औपदेशिकी कहलाती है।

सहजा के भेद:

१. अयोनिच्छायार्थ – जिस पर अन्य की छाया नही वह।

आहार्या का भेद:

१. अन्ययोनिच्छायार्थ – जिस पर अन्य की छाया हो। इसके तीन भेद हैं।

अ) प्रतिबिम्ब कल्पार्यदा:

इसकी काव्य में कोई उपयोगिता नहीं है। इसमें न तो शरीगत और न ही स्वभावगत अन्तर होता है। प्रतिबिम्ब का तो शरीर भी तात्विक नही होता।

ब) आलेख्य प्रख्यार्थदा:

आलेक्ष्य अर्थ में प्रतिबिम्ब अर्थ से यह अन्तर होता है कि यहा बाह्य अन्तर अर्थात् शरीर स्थानीय, शब्दार्थ विन्यास में भिन्नता होती है परन्तु अन्तर आत्मा तत्व का सर्वथा अभाव रहता है।

क) तुल्य देहिवत (अन्य देहिवत):

इसमें शरीर तो भिन्न रहता ही है, आत्मा भी अंशत: भिन्न रहती है।

उत्पाद्या (उत्पन्न करना)

उत्पाद्या में कवि अपनी ओर से काव्य रचना हेतु प्रयत्न करता है। इसके दो भेद है।

१. व्युत्पत्ति २. अभ्यास

व्युत्पत्ति:

व्युत्पत्ति को आ. राजशेखर ने दो अर्थे में लिया हैं – बहुलता और उचितानुचित विवके कहते हैं

''बहुलता व्युत्पत्ति इत्याचार्य:।

चितानुचित विवेको व्युत्पत्ति इति मायावरीय:।।''[२१]

''आचार्य वाग्भट् (प्रथम) ने इसकी व्याख्या करते हुए लिखा है कि व्याकरण कोश आदि शब्दशास्त्र, श्रृति, स्मृति, पुराण आदि अर्थशास्त्र, वात्स्यायन, कोक आदि काम–शास्त्र तथा काव्यालंकारशास्त्र में गुरू–परम्परा से रीतिपूर्वक उपदेश ग्रहण करके जो असाधारण परिज्ञान प्राप्त किया है, उसे व्युत्पत्ति कहते है।''[२२]

व्युत्पत्ति के तीन स्वरूप डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी जी ने बताएं हैं

१. कोई उसे निपुणता बताता है।

२. कोई उसे उचितानुचित विवके कहता है।

३. कुछ आचार्य उसे बहुज्ञता कहते है।

व्युत्पत्ति के तीन भेद है:

लोक निरीक्षण:

कवि लोक व्यवहार से उत्पन्न अनुभूतियों के कार्य, कारण, भाव को इस प्रकार हृदयगंम कर लेता है। वह जब चाहें कल्पना से उन परिस्थितियों को संजोकर प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न अनुभूति में मग्न हो सकता है।

शास्त्रानुशीलन:

लोक निरीक्षण के साथ पूर्व आचार्यो की अनुभूतियों का शास्त्रीय विश्लेषण भी आवश्यक है। इसके द्वारा परम्परागत महत्वपूर्ण प्रतिभाओं का हम उपयोग कर लेते है। काव्योचित सौन्दर्य के विभिन्न प्रतिभाओं का ज्ञान हमें काव्यशास्त्र या लक्षण ग्रन्थों से तो होता ही है, अन्य शास्त्रों से भी हमें काव्योचित सामग्री का परिचय मिलता है।

काव्यद्यवेज्ञण:

उत्पाद्या प्रतिभा का परिश्कार करने के लिए लोक और शास्त्र का ही नही, अपितु काव्याद्यवेज्ञण या काव्य परम्परा का ज्ञान भी आवश्यक है।

अभ्यास:

आचार्यों ने प्रतिभा और व्युत्पत्ति के अनुरूप ही अभ्यास को भी काव्य रचना के लिए महत्वपूर्ण माना है। अभ्यास तात्पर्य है अधिक समय गुरू के समीप रहकर काव्य रचना का अभ्यास करना। अभ्यास के अभाव में अनेक प्रतिभाएं कुण्ठित होकर निष्फल हो जाती है। अभ्यास के कारण कवि उत्कृष्ट कोटि की काव्य रचना कर सकते है ऐसा कुछ आचार्यो का मानना है।

''करत करत अभ्यास ते जडमति होत सुजान।
श्रसदि आवत जात ते सिल पर पड़त निशाना।।''

१ आंतर २ बाह्य

Scanned with OKEN Scanner

आंतर:

"आंतर अभ्यास समाधि है और समाधि का अर्थ है मन की एकाग्रता विक्षिप्त अंत:करण में न तो विषयोचित सामग्री का सप्रयत्न अनुसंधान हो सकता है। अत: न तो स्वयं स्फुरण।"

बाह्य:

"अभ्यास का यह दूसरा रूप है। इसके दो भेद है।

अ) दिव्य:

दिव्य उपाय से तात्पर्य है अदृश्य शक्तियों की उपासना। जैस की हर्श एवं मूक कवि के लिए प्रसिद्ध है।

ब) पौरूशेय:

अर्थात् यत्न या प्रयत्न। अपने द्वारा किये गये नियमों या काव्य प्रणयन का पुन:—पुन: अभ्यास।

निष्कर्ष:

भारतीय आचार्यों में काव्य हेतु लेकर मत भिन्नता दिखाई देती है। कोई प्रतिभा को महत्व देता है तो कोई आचार्य व्युत्पत्ति को तो कोई अभ्यास को। परन्तु अन्त में हमें यही दिखाई देता है कि सभी आचार्य अन्तिम रूप में इन तीनों को ही काव्य हेतु के रूप में मानते है। उसी तरह पाश्चात्य विद्वानों को अगर हम देखे तो फ्रायड और एडलर आदि को छोड़ सभी विद्वान किसी ना किसी रूप में भारतीय आचार्यो का ही समर्थन करते हैं। अंतत: काव्य अंर्तात्मा की अद्वितीय आवाज है जो भी इसे पा ले वो इस जगत् पर छा जाता सम्मान, कीर्ति सब उसके कदम चूमते हैं।

संदर्भ

१) डॉ. अर्चना श्रीवास्तव — भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र — पृ.सं. १५

२) डॉ. देशराजसिंह भाटी — भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र — पृ.सं. १५

३) डॉ. देशराजसिंह भाटी — भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र — पृ.सं. ३३

४) डॉ. अर्चना श्रीवास्तव — भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र — पृ.सं. १७

५) डॉ. देशराजसिंह भाटी — भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र — पृ.सं. ३९

६) डॉ. देशराजसिंह भाटी — भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र — पृ.सं. ३९

७) डॉ. सत्यदेव चौधरी, डॉ. शान्तिस्वरूप गुप्ता — भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र का संक्षिप्त विवेचन — पृ.सं. ६

८) डॉ. देशराजसिंह भाटी — भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र — पृ.सं. ३७

९) डॉ. देशराजसिंह भाटी — भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र — पृ.सं. ३७

१०) डॉ. देशराजसिंह भाटी — भारतीय काव्यशास्त्र के प्रमुख शीर्षक

११) डॉ. देशराजसिंह भाटी — भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र — पृ.सं. ३७

१२) डॉ. देशराजसिंह भाटी — भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र — पृ.सं. ३८

❑❑❑

Scanned with OKEN Scanner